International Journal of Sociology and Political Science
www.sociologyjournal.in
Online ISSN: 2664-7745, Print ISSN: 2664-7737
Received: 20-10-2021; Accepted: 05-11-2021; Published: 21-11-2021
Volume 3, Issue 2, 2021, Page No. 61-63

गाँधी दर्शन और वैश्विक परिदृश्य

पवन कुमार तिवारी
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

आज विश्व उथल–पुथल के महासागर में गोते खा रहा है जहाँ एक तरफ हम 21वीं शताब्दी की विकसित तकनीक की तरफ बढ़ रहे हैं वहीं दूसरी तरफ हम अपनी मूल संस्कृति को खोते जा रहे हैं जो कि सृष्टि में जन्म लेते ही एक मनुष्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और मनुष्य को इस बात को कभी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि वह इस सृष्टि का सबसे ज्यादा समझदार एवं सूझबूझ वाला प्राणी है और उसके कन्धों पर समाज को आगे ले जाने की जिम्मेदारी है। इसके विपरीत आज जनमानस का अधिकांश भाग व्यभिचार, हिंसा, चोरी, छल आदि में लिप्त होता जा रहा है जो कि आने वाले समय में पूरे भूमण्डल के लिए बहुत बड़े खतरे की तरफ ले जाने का संकेत है और आज व्यक्ति इन्हीं कुरीतियों को अपनी सफलता की सीढ़ी बना रहा है। गाँधीजी ने 20वीं शताबदी में ही इन विषयों पर गहन प्रकाश डालते हुए कहा था कि अगर मनुष्य को अपने आप को, समाज को, राष्ट्र को समृद्ध बनाना है तो उसे हिंसा, असपृश्यता, व्यभिचार, नारी विभेद, छुआछूत आदि को त्यागना पड़ेगा तभी जाकर हम एक समृद्ध समाज और मजबूत राष्ट्र की कल्पना कर सकते हैं।

मूल शब्दः औद्योगीकरण, आर्थिक आत्मनिर्भरता, लोकतंत्र, पूँजीवाद, समाजवाद

प्रस्तावना

यदि बीसवीं शताब्दी समाजवाद की शताब्दी है तो 21वीं शताब्दी प्रजातंत्र की शताब्दी है। प्रजातंत्र का सूर्योदय या प्रस्फुटन अब विश्व के अल्प विकसित राष्ट्रों में भी हो रही है। लोकतंत्र की भाव तरंगें उन देशों को भी स्पर्श कर रही हैं जहाँ का सत्ता प्रतिष्ठान प्रारम्भिक रूढ़िवादी तानाशाही प्रवृत्ति वाला राजशाही के साथ सहयुक्त है। अद्यतन में खाड़ी के देशों में जो कि युगों–युगों से तानाशाही की मजबूत जंजीरों में जकड़ा हुआ था, आज वहाँ की जन आकांक्षायें लोकतंत्र को अंगीकार करने के लिए मचल रही हैं और जनमानस इस लोकतंत्र की पावन नदी में डुबकी लगाने को बहुत ही बेसब्री से इन्तजार कर रहे हैं।[1]

पाश्चात्य पूँजीवादी देश अधिकाधिक मात्रा में औद्योगीकरण आविष्कार तथा अनन्य प्रकार की वैज्ञानिक उपलब्धियों को प्राप्त करने के उपरान्त भी आर्थिक आत्मनिर्भरता को नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं जिसके कारण पूँजीवाद की सफलता पर एक यक्ष प्रश्न प्रश्नगत हो जाता है जिसके सफल होने की अभी दूर तक कोई किरण नहीं दिखायी पड़ रही है।

प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरान्त भी 21वीं शताब्दी के प्रथम दशक में विश्व का मूल्यांकन करना तथा विश्व का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करना शोध अध्येता का प्रतिपाद्य विषयवस्तु है। शोधार्थी का सद् प्रयास है कि अद्यतन विश्व के सामाजिक जीवन की गहरी गवेषणा प्रस्तुत करे और इस बात पर प्रकाश डालने की कोशिश करे कि क्या वास्तव में वैश्विक राजनीति का परिदृश्य अपने गंतव्य मार्ग से भटक गया है और क्या वास्तव में आज इस विषय पर शोध की आवश्यकता है, इन्हीं बिन्दुओं पर शोधार्थी का शोध प्रतिबिम्बित होगा।[2]

सत्ता, संस्कृति और समाज जब एक संरेख में होते हैं तो वह कालखण्ड ऐतिहासिक दृष्टि से स्वर्णकाल के रूप में अभिहीत किया जाता है। सुदूर अतीत का गुप्त काल की संगणना इसी कोटि में की जाती है परन्तु वर्तमान विश्व का स्वरूप जिसमें शक्ति, सत्ता, संस्कृति तथा समाज की एकरूपता विश्रृंखल हुई है, संस्कृति उस मात्रा एवं अनुपात में समाज को अनुप्रेरित नहीं कर पा रही है जैसा कि वह अतीत में करने में सक्षम थी, इसके कारकों की व्युत्पत्ति के मूल को जानन आवश्यक नहीं विवशता है। वर्तमान विश्व में भौतिकतावादी प्रवृत्तियाँ अविभावी होती जा रही हैं इससे व्यक्ति की अर्थलिप्सा में अनवरत् वृद्धि हो रही है, जिसमें विश्व शान्ति की परिकल्पना वैश्विक स्तर पर आज भी एक आदर्श मानक की प्रतीक्षा कर रही है। परमाणु सम्पन्न देश तथा सम्भावित परमाणु शक्ति की प्रत्याशा वाले देश अपने अस्त्र शस्त्र की मारक क्षमता में गुणात्मक वृद्धि कर रहे हैं क्योंकि शक्ति की प्रतिस्पर्धा का कोई आखिरी बिन्दु नहीं होता है अतः प्रतिस्पर्धा अपनी निरन्तरता बनाये हुए है अस्त्र शस्त्र की बढोत्तरी का क्रम निरन्तर अस्तित्व मात्र है ऐसी परिस्थिति में विश्व शान्ति एक मृग मरीचिका के सादृश्यमान है इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए महान वैज्ञानिक आइंस्टीन ने विश्व शान्ति की प्रत्याशा गाँधीवादी आदर्शों में करते हुए जुलाई 1944 में लिखा था– ‘‘भावी पीढ़ियों को विश्वास न होगा कि इस धरती पर हांड़ मांस का कोई गाँधी जन्मा भी था।’’वर्तमान वैश्विक संरचना के सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक पक्ष से नैतिकता तिरोहित होती जा रही है। सामाजिक, राजनैतिक मूल्यों के संकट एवं संक्रमण का दौर चल रहा है यह वर्तमान विश्व की त्रासदी है, इस मूल्यांत्मक क्षरण के कारण सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक जीवन विकृतियों से भरता जा रहा है ऐसे परिवेश में व्यक्तिवादिता तथा स्व–सम्बन्धी उपलब्धियों की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है तथा परहित की भावनायें, आत्मानुशासन की जड़े हिल रही हैं, व्यक्ति के चिंतन में विस्तार की अपेक्षा संकुचित होती जा रही है इस प्रक्रिया का प्रतिफल इस रूप में हमारे सामने आ रहा है कि एक ओर अर्थ का संकेन्द्रण हो रहा है तो दूसरी ओर समाज की परिधि पर खड़े लोगों का जीवन स्तर तथा क्रय शक्ति लगातार कमजोर होती जा रही है। आर्थिक संरचना के इन भयावह अन्तर से नक्सलवादी प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिल रहा है जिसके कारण हिंसा और व्यभिचार बढ़ रहा है जो कि सामाजिक संतुलन को अस्थिर कर रही है जिससे कि आने वाले समय में सम्पूर्ण विश्व एक ऐसे मार्ग पर जाता दिखाई पड़ेगा जहाँ

पर स्थिरता का नामोनिशान नहीं है।[3]

उपर्युक्त विश्व का मूल्यांकन करना तथा विश्व की यथार्थ स्थिति का चित्र प्रस्तुत करना ही अध्येता का प्रमुख उद्देश्य है और शोधार्थी का यह प्रयास होगा कि वह एक संतुलित विश्व की रूपरेखा को जनमानस के सम्मुख प्रस्तुत कर सके।

वर्तमान विश्व एक लट्टू की भाँति कई सारे झंझावातों के बीच घूम रहा है जिसमें मनुष्य के अपने नैतिक मूल्यों से लेकर समाज के सामाजिक मूल्यों, आर्थिक मूल्यों आदि में निरन्तर गिरावट आ रही है। आज मनुष्य अपने व्यतिक्तगत स्वार्थो में इतना तल्लीन हो गया है कि वर्तमान विश्व में उपर्युक्त मानकों की परिभाषा बदल गयी है, मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज में उसकी एक महत्वपूर्ण भूमिका है। समाज में रहते हुए वह अपनी इस भूमिका का बहुत ही गम्भीरतापूर्वक निर्वहन करता है उसके योगदान में आज निरन्तर गिरावट आ रही है जिसके कारण मनुष्य समाजवाद की अपेक्षा व्यक्तिवाद की तरफ अग्रसर हो रहा है जिसके कारण वैयक्तिक मूल्यों का निरन्तर क्षरण हो रहा है। गाँधी जी ने मनुष्य की परिभाषा को व्याख्यांकित करते हुए कहा था कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जिसके कारण उसका प्रथम दायित्व अपने से ज्यादा समाज के प्रति है और उसे इस बात को कभी भी नजरन्दाज नहीं करना चाहिए कि उसका अपना विकास और अस्तित्व समाज के विकास और अस्तित्व से जुड़ा है बिना समाज के मनुष्य के अस्तित्व की कल्पना नही की जा सकती, जिसके कारण व्यक्ति को सर्वप्रथम सामाजिक विकास को प्रथम प्राथमिकता देनी चाहिए, इसी में व्यक्ति का स्वयं, समाज का, राष्ट्र का तथा पूरे विश्व का कल्याण समाहित है, इसी बात को आगे बढ़ाते हुए गाँधी जी कहते हैं कि मनुष्य को अपनी शारीरिक जरूरतें पूरी करने के लिए यहाँ तक कि उसकी अपनी बौद्धिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए उसकी एक सीमा या हद तय होनी चाहिए क्योंकि इस मर्यादा को लाँघने पर यह प्रयत्न शारीरिक और बौद्धिक विलास का रूप ले लेता है। मनुष्य को अपने शारीरिक सुखों एवं सांस्कृतिक सुविधाओं की ऐसी ढंग से व्यवस्था करनी चाहिए कि वे उसकी मानव सेवा में बाधक न बनें और ये सुविधायें मनुष्य को समाज के एक निर्माण पुरुष के रूप में आगे लायें न कि उसके बाधक के रूप में, अतएव मनुष्य को अपनी सारी शक्तियों का उपयोग मानव सेवा और समाज के विकास में करना चाहिए।[4]

आज के सामाजिक परिवेश में जैसे ही शिशु जन्म लेता है उसके तुरन्त बाद माता पिता के द्वारा उसके विकास के साथ उसमें प्रतिद्वन्द्विता की भावना का बीज बोना शुरू कर देते हैं जो धीरे–धीरे बालक के मानसिक विकास को सामाजिक प्रतिबद्धता के बजाय व्यक्तिवादी महत्वाकांक्षा की तरफ परिवर्तित करता जाता है जो इस समाज के लिए घातक सिद्ध होता है। यह प्रतिद्वन्द्विता आपसी प्रेम भावना, सदाचार, सहयोग आदि को चन्द्रग्रहण की भाँति निगल जाता है जिसके कारण भाई–भाई का दुश्मन होता जा रहा है। मित्र अपने मित्र के साथ धोखा करता जा रहा है। आज समाज और विश्व इस विकट परिस्थिति से गुजर रहा है जिसका दूर–दूर तक निवारण नहीं दिख रहा है जो कि समाज में सामाजिक बुराइयों को जन्म दे रहा है आज व्यक्ति के लिए उसके जीवन में पैसे से ज्यादा महत्व की वस्तु कोई दूसरी नहीं रह गयी है जिसके कारण नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। मनुष्य में 'मैं' की भावना सामाहित होती जा रही है और यह युग केवल भेदभाव और वाद का होकर ही रह गया है। केवल शिक्षा, केवल कला, केवल साहित्य, केवल धर्म, केवल नीति, केवल व्यक्तिगत लाभ। इसी में सिमट कर रह गया है। गनीमत केवल इस बात की रह गयी है कि अभी तक कोई केवल जीवनवादी और केवल मृत्युवादी अपना सम्प्रदाय बनाने की चेष्टा नहीं कर रहे हैं।[5]

आज विश्व उथल–पुथल के महासागर में गोते खा रहा है जहाँ एक तरफ हम 21वीं शताब्दी की विकसित तकनीक की तरफ बढ़ रहे हैं वहीं दूसरी तरफ हम अपनी मूल संस्कृति को खोते जा रहे हैं जो कि सृष्टि में जन्म लेते ही एक मनुष्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और मनुष्य को इस बात को कभी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि वह इस सृष्टि का सबसे ज्यादा समझदार एवं सूझबूझ वाला प्राणी है और उसके कन्धों पर समाज को आगे ले जाने की जिम्मेदारी है। इसके विपरीत आज जनमानस का अधिकांश भाग व्यभिचार, हिंसा, चोरी, छल आदि में लिप्त होता जा रहा है जो कि आने वाले समय में पूरे भूमण्डल के लिए बहुत बड़े खतरे की तरफ ले जाने का संकेत है और आज व्यक्ति इन्हीं कुरीतियों को अपनी सफलता की सीढ़ी बना रहा है। गाँधीजी ने 20वीं शताबदी में ही इन विषयों पर गहन प्रकाश डालते हुए कहा था कि अगर मनुष्य को अपने आप को, समाज को, राष्ट्र को समृद्ध बनाना है तो उसे हिंसा, असपृश्यता, व्यभिचार, नारी विभेद, छुआछूत आदि को त्यागना पड़ेगा तभी जाकर हम एक समृद्ध समाज और मजबूत राष्ट्र की कल्पना कर सकते हैं जिन सामाजिक कुरीतियों को गाँधी जी ने चार दशक पहले ही भाँप लिया था और मनुष्य को उससे बँधने की हिदायत दी थी यह विडंबना की बात है कि आज समाज उन्हीं सामाजिक कुरीतियों के फंदे में बुरी तरह जकड़ता जा रहा है और समाज को प्रगतिशील बनाने के बजाय अपनी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा और लिप्सा को पूर्ण करने की दिशा में अग्रसर है जिसके परिणाम स्वरूप वह अपनी सामाजिक और नैतिक जिम्मेदारियों से विमुख होकर सामाजिक विकास के पथ को छोड़ता जा रहा है जो कि आने वाले समय में एक स्वस्थ समाज और समृद्ध राष्ट्र के निर्माण के लिए शुभ संकेत नहीं है। आज विश्व पर्यावरणीय असंतुलन का शिकार होता जा रहा है जिस 21वीं सदी में हम तकनीक का सहारा लेकर एक विकसित और समृद्ध विश्व की कल्पना का ढिंढोरा पीट रहे हैं वही तकनीक आज पूरे विश्व को पर्यावरणीय असंतुलन की खाई में ढकेलती जा रही है जिन मशीनों और उद्योगों के माध्यम से हम समाज को लाभ पहुँचाने की बात कर रहे हैं वही उद्योगों व मशीनों का उपयोग जनमानस को शारीरिक, आर्थिक और मानसिक क्षति पहुँचा रहे हैं जिसकी भरपाई मुश्किल है। इन उद्योगों ने राष्ट्रों को आपसी प्रतिद्वन्द्विता के कटघरे में ला खड़ा कर दिया है आज प्रत्येक देश अपनी शक्ति का प्रदर्शन अपनी इन्हीं तकनीकों के माध्यम से प्रदर्शित कर रहे हैं अपने–अपने उद्योंगों के विकास और उसकी समृद्धि के लिए राष्ट्र एक दूसरे के दुश्मन बनते जा रहे हैं और भयंकर युद्ध के मुहाने पर आकर खड़े हो गये हैं इस मशीनरी के उपयोग से जनमानस के अधिकांश लोग आज बेरोजगारी का शिकार होते जा रहे हैं आपसी कुंठा उनको ग्रसित करती जा रही है जिससे उनका अपना मानसिक विकास कुंठित हो रहा है जो कि एक प्रबुद्ध समाज एवं शक्शिाली राष्ट्र के लिए नुकसानदेह है।

गाँधी जी इन्हीं समस्याओं से बचने के लिए स्वरोजगार को बढ़ावा देने की बात की थी। गाँधीजी ने कहा था कि प्रत्येक राष्ट्र को ऐसे उद्योगों को विकसित करने का प्रयास करना चाहिए जिसमें जनमानस का अधिकांश प्रतिशत स्वरोजगार के कार्य में सम्मिलित हो सके इन्हीं बातों पर जोर देते हुए गाँधी जी ने कहा था कि यंत्रों की ऊपरी विजय से चमत्कृत होने से मैं इनकार करता हूँ और मारक यंत्रों के मैं खिलाफ हूँ उसमें मैं किसी प्रकार का समझौता स्वीकार नहीं कर सकता। लेकिन ऐसे सादे औजारों, साधनों या यंत्रों का जो कि व्यक्ति की मेहनत को बचाये और झोपड़ियों में रहने वाले लाखों, करोड़ों लोगों का बोझ कम करे मैं जरूर स्वागत करूँगा।[6]

मशीनरी और उद्योगों के उपयोग का परिणाम जनमानस के आर्थिक क्षति के साथ–साथ शारीरिक और मानसिक क्षति में अग्रणी भूमिका निभा रहा है आज लोगों को रासायनिक उर्वरक के अत्यधिक उपयोग के कारण स्वच्छ और शुद्ध खाने की सब्जियाँ, खाद्य पदार्थ नहीं मिल पा रहे हैं। अत्यधिक उर्वरक युक्त होने के कारण मनुष्य विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो रहे हैं जिसके फलस्वरूप दवाओं को बनाने के लिए अलग–अलग कम्पनियों में होड़ सी मच गयी है कुछ ऐसी दवाइयाँ भी बाजार में भेज दी जा रही हैं जिनका परीक्षण तक प्रयोगशाला में ठीक से नहीं किया गया है जो कि समाज के लिए आने वाले दिनों में शुभ संकेत नही हैं, जनमानस पूरी तरह से इनकी गिरफ्त में जा चुका हे जिसके भयावह परिणाम लोगों के सामने आ रहे हैं और इनकी निर्भरता के कारण जनमानस पूरी तरह से अपनी मूल इच्छा शक्ति को खोता जा रहा है और अपनी आवश्यकताओं से भटकता जा रहा है।

आज विश्व अनेकानेक सामाजिक समस्याओं से घिरता नजर आ रहा है जिसकी शुरुआत हमारे घर अर्थात परिवार से प्रारम्भ होती है और शनैः शनैः समाज, राज्य, राष्ट्र और पूरे विश्व को अपनी चपेट में ले लेता है आज परिवार एकलवादी नीति का शिकार होते जा रहे हैं। आज बालक के जन्म लेते ही उसके परवरिश और संस्कार में अपने और पराये की भावना का बीज प्रस्फुटित कर दिया जा रहा है जिसके कारण उसकी मानसिकता एक संकीर्ण विचारधारा को आत्मसात करती जा रही है यह सामाजिक विकास के लिए बहुत बड़ा जहर है और यह जहर आगे चलकर समाज व राष्ट्र के विनाश में अग्रणी भूमिका निभाते हैं। आज हमें गाँधी जी द्वारा बतायी गयी उन्हीं बातों का ध्यान आ रहा है जो कि उन्होंने बहुत पहले ही परिवार को लेकर सन्दर्भित की थीं कि बालक को जन्म लेते ही और उसके परवरिश में उन संस्कारों को दिलाने की जरूरत है जिसमें वह सामूहिक परिवार व सामाजिक विकास की नीति को समझ सके और आगे चलकर वह इसमें अपनी भूमिका का निर्वहन कर सके और वह इन नीतियों को समाज में प्रसारित कर सके जो कि मानव विकास के मार्ग में सहयोग कर सके इन्हीं महत्वपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखते हुए एवं गाँधी जी को संदर्भित करते हुए डा0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था कि मानवीय एकता और सामूहिक परिवार का स्वप्न वे महान आत्माएँ साकार कर सकती हैं जिसकी धर्मपरायण आत्मा किसी भी भौगोलिक अथवा ऐतिहासिक सीमा से प्रभावित नहीं है बल्कि न्याय, स्वातंत्र्य, ईमानदारी, सत्य, ईश्वर और मानवता का पुजारी है।[7]

समाज नागरिक जीवन की प्रथम पाठशाला है , मानव के चेतनशील होने का परिचायक समाज कहलाता है समाज का निर्माण कई वैचारिक आरोह अवरोह से होता है समाज संवेदनाओं का समुच्चय है चेतना की अभिव्यक्ति ही मानव के परिष्कार की कुंजी है मानव के विकास की आधारशिला है समाज के बिना राज्य स्वरूप ग्रहण नहीं कर सकता, समाज एक ऐसा सोपान है जिसमें मानव जीवन के विविध आयाम समाहित होते हैं, स्त्री पुरुष का सह अस्तित्व समाज की गत्यात्मक ऊर्जा है एलेक्स डी. टाकविल ने अपनी प्रसिद्ध रचना डेमोक्रेसी इन अमेरिका में इस बात पर जोर दिया है कि 20वीं शदी में विभिन्न साहचर्यों ने राज्य के तानाशाही के खिलाफ और व्यक्तियों की स्वतंत्रता की सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है टाकविल मानते हैं कि लोकतान्त्रिक सरकारों में समाज में समता को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति होती है परन्तु सामाजिक समता के लिए सामाजिक पद सोपानों को समझना उन्हें व्याख्यायित करना एवं व्यवस्थित करना अनिवार्य शर्त है समाज की आधारभूत संरचना का अन्वेषण किये बिना विवेचन किये बिना मानवीय सभ्यता एवं मानवीय जीवन का मूल्यांकन सम्भव नहीं हो पाएगा।

विश्व इतिहास के प्रबोधन काल में 19वीं शदी में हीगल और मार्क्स के दर्शन में नागरिक समाज की दो शक्तिशाली समीक्षायें सामने आयीं क्रमशः आदर्शवादी समीक्षा तथा भौतिकवादी समीक्षा। आदर्शवादी अवधारणा के अनुसार विचार के प्रति आस्था तथा विचार के प्रति क्रियात्मक सक्रियता समाज की आधारशिला है इसके विपरीत भौतिकवादी अवधारणा की मान्यता है कि सामाजिक विकास की अवस्था का निर्धारण उत्पादन तथा वितरण के अर्न्तसम्बन्धों तथा पूँजी पर आधिपत्य से अवधारित होता है।

19वीं शताब्दी के प्रबोधनकालीन विचारकां की तरह ही हीगेल भी नागरिक समाज को एक ऐसे दायरे के रूप में मानते हैं जो बाजार में शामिल लोगों से मिलकर बना है इसलिए वे नागरिक समाज को एक ऐसी व्यवस्था के रूप में मानते हैं जिसमें औपचारिक रूप से स्वतंत्र और समान व्यक्ति काम और व्यापार के लिए एक दूसरे से जुड़ते हैं इसके अलावा इसमें ऐसी नागरिक संस्थाएँ भी शामिल हैं जो इस तरह की व्यवस्था को बनाए रखने के लिए जरूरी है इस व्यवस्था में बाजार, न्यायालय, न्याय का प्रशासन और बिजनेस कॉरपोरेशन जैसी संस्थाएँ शामिल हैं।

सन्दर्भ

1. समाजवादी दर्शन और डा0 लोहिया और उनकी सांस्कृतिक दृष्टि– लक्ष्मीकांत वर्मा, सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग उत्तर प्रदेश लखनऊ 1991, पृ0सं0 202, 203
2. गाँधी जी का जीवन प्रभात, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन एन 77 कनाट सर्कस नई दिल्ली, पृ0 सं0 20
3. भारत में उदारीकरण एवं समाजवाद की प्रासंगिकता– सुरेन्द्र मोहन, मयूर प्रकाशन, चेयर वैक्स, नई दिल्ली।
4. गाँधी जी ने कहा था, सेलेक्शन फ्राम गाँधी पृष्ठ 39, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, 2009
5. गाँधी की दृष्टि, दादा धर्माधिकारी, पृष्ठ 7 सर्वसेवा संघ प्रकाशन राजधाट वाराणसी, तीसरा संस्करण, अगस्त, 2006
6. मेरे सपनों का भारत, मोहन दास करम चन्द गाँधी, संग्रहकर्ता आर0के0 प्रभु सर्वसेवा संघ प्रकाशन, राजघाट वाराणसी, यंग इण्डिया 17/06/2006 पृ0 सं0 35
7. महात्मा गाँधी की जय, सम्पादक श्री मन्ननारायण भवानी प्रसाद मिश्र, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, पृ0 सं0 9